IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

पं. सुधाकर शुक्ल के साहित्य में सौन्दर्यशास्त्र का अनुशीलन

संध्या शर्मा

शोध छात्रा हिन्दी

शास. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)

प्रस्तावना–मानव–जीवन के सार्वभौम, सार्वकालिक मौलिक मूल्यों सत्यं शिवं सुन्दरं में से सौन्दर्य का स्थान अत्यन्त उच्च है। भारतीय दार्शनिक चिन्ता में सत, चित, आनन्द नामक ब्रह्म के तीन स्वरूपों में से आनन्द स्वरूप उसके चरम विकसित रूप का द्योतक समझा जाता है क्योंकि सत्ता वस्तुतः आनन्द रूप के विकास में ही अपने आप को आशयपूर्ण या सार्थक करती है। आनन्द और सौन्दर्य का घनिष्ठतम सम्बन्ध है। आत्मानुभव की सर्वाच्च स्थिति का सार आनन्द है और यह आनन्द भावना ही सर्वत्र सौन्दर्य का दर्शन करती कराती है। वास्तविक सौन्दर्य का दर्शन हममें आनन्द भावना का संचार करता है तात्पर्य यह है कि भारतीय जीवन–दृष्टि सौन्दर्य को अत्यन्त उच्च स्थान देती है। सौन्दर्यानुभूति तथा आत्मानुभूति के साथ समवाय–सम्बन्ध में निवास करती है। सौन्दर्य जीवन के स्थाई व शाश्वत प्रेरणा स्रोतों में से एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। यह मानव संस्कृति एवं सौन्दर्यशास्त्र का एक सक्रिय तत्त्व है।

कुञ्जी शब्द– सार्वकालिक, स्वरूपों, आत्मानुभव, सर्वोच्च, सौन्दर्य, अत्यन्त, शाश्वत।

- सौन्दर्य स्वरूप– सुधाकर द्वारा निरूपित सौन्दर्य पर विचार करने से पूर्व सौन्दर्य के स्वरूप से अवगत होना आवश्यक है क्योंकि वही सुधाकरजी की उपलब्धियों को आंकने का उचित व व्यापक निष्कर्ष प्रदान कर सकेगा।

सौन्दर्य क्या है वह पदार्थों का गुण धर्म मात्र है अथवा एक निरूपाधिक मानसिक भावना अथवा उन दोनों का मिश्रित परिणाम है। सौन्दर्य एक सार्वजनिक और सार्वकालिक अनुभूति है। अतः धर्म, दर्शन, कला, मनोविज्ञान तथा साहित्य आदि सभी ज्ञान क्षेत्रों में इस विषय पर चर्चा मिलती है। परिणाम स्वरूप स्थूल वस्तु या देह के प्रत्यक्ष गुण धर्म और उपयोगिता से लेकर आत्मा के प्रदेश की सूक्ष्मतम या निराकार भावना तक–इन दो सुदूर किनारों के बीच इस अनुभूति का विस्तार सौन्दर्य विषयक शास्त्र चिन्ता में देखा जा सकता है। इस विषय पर इतना व्यापक व तीव्र मतभेद है कि सौन्दर्य के स्वरूप का अन्तिम व सर्वमान्य निर्णय सर्वथा असम्भव है।

''वह रूप राशि सरसी वह,

निश्छल छवि भोली भाली।

वह अङ्ग अङ्ग लता सब,

नव अंगूरों की डाली ॥''[1]

सीमा, रजनी, नीतू तीन सहेलियाँ, जीवन के हर बुरे-भले समय में एक जुट होकर कार्य करती है। संसार का ऐसा कोई काम नहीं जो वे तीनों न कर सकें। पुरुष के समान नही, पुरुष से भी अधिक पौरुष प्रधान कार्य करते दिखाई देती हैं। इन तीनों का सफर आठवीं कक्षा से आरंभ हुआ। आज 15 वी कक्षा समाप्त होने को थी।

''जाना फिर कनखल जलद? जहाँ पर जन्हुसुता सुखदेनी

हिमगिरि से उतर सगर-तनय-तारिणि सुरलोक-नसेनी

गिरि-राज-षोरी गौरी के मुख-कोप-कुटिल भ्रुरकुटी पर

हंसकर फेंनिल लहरि से थाम हिमकर जिसने जकड़े हर।।''[2]

सुधाकर शुक्ल ने मेघसुधा में सौन्दर्यता को व्यक्त किया है। सौन्दर्यता का संबंध जीवन के उन विषय के बारे में बताया है, जो मनुश्य में नैतिकता हमेशा हिमगिरि की तरह होती है।

पं. सुधाकर शुक्ल ने देवदूतम् उत्तरार्द्ध में मौलिकता एवं सौन्दर्यता को व्यक्त किया है, जिसमें कई प्रकार की दृश्टिकोण स्थापित है। सौन्दर्थ वही है जो नयन एवं मन का विश्राम स्थल हो। यथा-

सौन्दर्य यन्नयनमनसो विश्रमस्य स्थलस्यात्।[3]

अर्थात् जहाँ नयन एवं हृदय एकीभूत होकर सौन्दर्य का आकाण्ठ पान कर अखण्डानुभूति करते हों वही सौन्दर्य है। यहाँ कवि की दृष्टि में नयन शब्द के सम्मेल से बाह्य सौन्दर्य तथा मन के मेल से आन्तरिक आध्यात्मिक, सौन्दर्य ग्रहण का एक परिपुष्ट, मौलिक सौन्दर्य विषयक दृष्टिकोण स्थापित करता है।

- सौन्दर्य का वर्गीकरण- कुछ ऐसे भी सौन्दर्य शास्त्री हुये जो आत्मसत्ता में विष्वास न रखते हुये सौन्दर्य को वस्तु की आकृति, सुषम तथा सन्मात्रा- अंगान्विति, सुव्यवस्था प्रमाणवद्धता, संगीत, संवादित्व, वैविध्य तथा वैचित्र्य आदि बाह्य गुणों तथा चटकीले विविध छायाओं व हल्के गाढ़े रंगों व सुखद कोमल स्पर्शा में ही देखते हैं। वस्तुतः यह भी एक दृष्टि है जो वस्तु वादियों या प्रकृतिवादियों द्वारा प्रवर्तित प्रचारित है।

संस्कृत के प्राचीन भारतीय कवि इसी सौन्दर्य भावना के उत्तराधिकारी हैं पर वे सौन्दर्य चिन्ता के एक नवीन उत्थान पर हैं और उस मूल सौन्दर्य को केन्द्रीय धरातल पर पार्थिव रूपों में भी देखकर तृप्त होते हैं। रामानुज व वल्लभ ने सृष्टि का सम्बन्ध ब्रह्म एवं सौन्दर्य के साथ दिखाया है। सौन्दर्य एक सूक्ष्मचरम भावना है। जो ऐन्द्रिय माध्यम से प्रकाशित होती है किन्तु वस्तुगत सौन्दर्य वृत्ति के विचारकों की दृष्टि

रूप, रंग, आकार, कोमलता, में सौन्दर्य का देखना समस्या को हल नहीं करता क्योंकि इनसे अभिव्यक्त होने वाले सौन्दर्य का मानदण्ड व्यक्ति से व्यक्ति तक बदला जा सकता है।

''जब उसके घट के सित स्फटिक से जल-पानार्थ लचोगे
तब तिरछे लटके उपरि स्व कटिके सुरकरि सदष जंचोगे।
उस धवल धार में पड़कर तब छबि छलक उठेगी ष्यामा
तज नियत मिलन-महि नव यमुना-संगम-समललित ललामा।।''[4]

पं. सुधाकर शुक्ल ने मेघसुधा में जीवन के नैतिक मूल्यों को बताया है, जिसके आधार पर मनुष्य की नीति एवं नियती का मूल्यांकन किया जाता है जिससे जीवन श्रेष्ठ एवं सौन्दर्यपूर्ण बन सके।

सब धर्मों या गुणों के प्रति हमारी रूचि या आकर्षण देश काल या व्यक्ति सापेक्ष है। अतः सौन्दर्य की सर्व मान्य तथा पूर्ण सन्तोष प्रद धारणा उसके आधार पर खड़ी नहीं की जा सकती है। ये सब गुण पदार्थों के परिवर्तनशील अस्थिर धर्म हैं जो सौन्दर्य के प्राथमिक या मूलगुण आकर्षण या नवीनता से मेल नहीं खाता है।

इसके अतिरिक्त कारण परम्परा की ओर बढ़ते ही यह स्पष्ट होने लगता है कि इन गुणों का स्रोत कोई भीतरी शाश्वत या सूक्ष्म तत्त्व है जिसका कि ये नामरूप गुण बाह्य प्रकाशन मात्र है। अतः चेतन तत्त्व के असंपृक्त इन बाह्य गुणों तक सौन्दर्य की सत्ता को स्वीकार करना सौन्दर्य को मूल से न समझ कर उसके डाल पात को समझने का प्रयास है। अतः यद्यपि ये बाह्य उपकरण सौन्दर्यानुभूति में पर्याप्त सहायक व सहयोगी होते हैं पर उन्हें हम सौन्दर्य का स्थाई आधार नहीं कह सकते है। वेदान्त, सांख्य, शैवागम किसी भी दर्शन के अनुसार इन उपकरणों को अपने आप में चरमगुण नहीं मान सकते क्योंकि आत्मा से असंपृक्त सौन्दर्य निर्जीव, अचिर, क्षणभंगुर है जो सबको एकसाथ तृप्त नहीं कर सकता।

आत्मगत-सौन्दर्य-दृष्टि- आत्मगत सौन्दर्य दृष्टि आत्मा की सत्ता या स्थिति के विष्वास या बौद्धिक निर्णय से परिचालित या अनुप्राणित है। विष्व की दार्शनिक व वैज्ञानिक विचारधारा आज आत्मवादी व अनात्मवादी दो शिविरों में विभक्त है। अनात्मवादी विचारधारा के प्रचारक आत्मा जैसी वस्तु में विष्वास नहीं करते हैं। वे अधिक से अधिक आत्मा को मन के विकसित रूप का पर्याय मानने को तैयार हैं।

उनकी दृष्टि में मन अणुओं से निर्मित है और अणु पार्थिव वस्तुओं से ही सूक्ष्मतम व अविभाज्य चरम सत्य है। किन्तु उधर भारतीय आत्मवादी आत्मा की स्वतन्त्र सत्ता, स्थिति व इकाई में विष्वास करते हैं। वेदान्त, शैवागम, न्यायदर्शन, वैशैषिक आदि में वैज्ञानिक चिन्तन प्रणाली द्वारा शुद्ध सनातन, अखण्ड व एक रस आत्मतत्त्व की निर्भ्रान्त पदावली में प्रतिष्ठा की गई है ऐसी स्थिति में सौन्दर्य चिन्ता भी आत्मतत्त्व से परिचालित हो तो कोई आश्चर्य नहीं है।

भारत की ही तरह पश्चिम में भी आत्मवादी दर्शन अनेक शताब्दियों से एक शीर्ष स्थानीय दर्शन रहा है। प्राकृतवाद, विज्ञानवाद, जड़वाद तथा विकासवाद आदिके बीच भी वह आज का जीवित दर्शन है।

सौन्दर्य के प्रसंग में उनकी मूल विचारधारा के प्रवाह को, जिससे पश्चिम का सारा आत्मपरक सौन्दर्य चिन्तन रूपायित है कुछ विचारकों के माध्यम से विहंगम दृष्टि से देखलेना उपयोगी होगा।

''पक्कोडनोस युद्ध खोरोऽहमस्मि,
अनुतीरे महिया समानवासो।''[5]

इन पंक्तियों में जीवन की महानता को बताया है, इसके अलावा मनुश्य और प्रकृति के बीच में सामंजस्य को चित्रित किया है। पं. सुधाकर शुक्ल ने पालि साहित्य को अधिक से अधिक व्यावहारिक बनाने के लिए उन्होंने बहुत सी गाथाओं को जीवन से जोड़ा है तथा उनमें सौन्दर्यशास्त्र को व्यक्त किया है।

- **सौन्दर्य के स्वरूप कुछ विषेश धारणाऐं-** सौन्दर्य के स्वरूप की एक परिपूर्ण धारणा कतिपय सौन्दर्य चिन्तकों के समुच्चय द्वारा खड़ी की जा सकती है। सौन्दर्य की वैशिष्ट्य सूचक अनेक विशेषताएं बताई जा सकती हैं पर उनमें से कुछ ऐसी हैं जो सौन्दर्य की प्राणभूत हैं, जिनके अभाव में सौन्दर्य, जीवन की एक महान उदात्त व गम्भीर अनुभूति नहीं कहला सकता। सौन्दर्य की ये विशेषतायें वस्तु या प्रमेय के बाहरी स्थूल रूपाकार या गुणों को भेदकर भीतर से प्रकट होने वाली उसकी आत्मस्थानीय विशेषतायें हैं। इन विशेषताओं के आकलन के बिना सौन्दर्य की अनुभूति स्वादहीन, निष्प्राण तथा झंकृतिशून्य है।

हेंस लार्सन ने सौन्दर्य चिन्ता के प्रसंग में कहा है कि तर्कभूमि से उठकर वस्तु के सम्यक रूप के अवरोध के क्षणों में मानो दृष्टा का तीसरा नेत्र ही खुल-जाता है और सब कुछ प्रकाशित हो जाता है।

कालिदास की दृष्टि में सौन्दर्य पावनकारी है। तथा उसका सम्बन्ध जन्म जन्मान्तर से है। भवभूति उसे ही सुन्दर मानते हैं। जो दिव्य गुणों से समन्वित हो। माघ उसे ही सुन्दर कहते हैं जो प्रतिक्षण नवीन हो। भारवि ने उसे ही सुन्दर कहा जो आत्मपर्यवसित हो और जिसे किसी अन्य की अपेक्षा न हो

न रम्यमाहार्यमपेक्षते गुणम् [6]

सूरदास की दृष्टि में श्रीकृष्ण के सौन्दर्य के सामने महामुक्ति की भी कोई पूछ नहीं। उनकी दृष्टि में रूप को छोड़कर दूसरा कोई रक्षक नहीं है। श्रीकृष्ण के रूप को देखे बिना गोपियों को सारा संसार सूना लगता है। रूप के प्रभाव से दृष्टा की सहज समाधि बन जाती है।

- **नख-सिख सौन्दर्य-** समस्त देह का चित्रण करने में सुधाकरजी तन्विशरीरलतिका, दामिनी के सदृश स्फुरित होने वाली गोरी-गोरी ललित गात्रयष्टि, शैशवशेषशरीर, श्यामशरीर, नतोदार सुन्दरि, कुसुमा भरण भूषित अंगलता, मेचक कुंचित केशराशि, मौलिश्री की मालाओं से अलंकृत तथा विचकिल कलिकाओं से गुथे हुये धम्मिल्लों जूड़ों के प्रति कवि बहुत आकृष्ट है। कंघी से रहित छितराये बाल भव्य-भाल-भूतल जिस पर कालसर्पिणी सी चिकुराशि विलसित हो रही है। कमनीयकांति से भरा हुआ कस्तूरी

मिश्रित तिलक से विभूषित सिन्दूरारुण रेखा से युक्त ललाट उनकी कल्पना के अनुकूल है। श्वेत, श्याम, अरुण नेत्रों की शोभा कानों तक फैले हुये रसस्त्रोतों से सरस कोमल नयन कमलानेहरू अपनी काय कान्ति से जहाँ अमर रमणियों को तिरस्कृत करने वाली है।

यदि मानव आन्तरिक सौन्दर्य, ज्ञान, धर्म, उदारता से रहित है तो वह उसका बाह्य सौन्दर्य वैसे ही हैं जैसे गर्दभ पर रखा हुआ भारः-

सौन्दर्य यदि वाह्यं, वाह्यन्तद् गर्दभेन गुरू भारम्। [7]

कवि अपने प्रिय में सौन्दर्य का दर्शन करता है क्योंकि प्रिय का दर्शन सौन्दर्य से पृथक वस्तु नहीं है, स्वयं सौन्दर्य का दर्शन ही प्रिय का दर्शन है और सर्वत्र ही उस सौन्दर्य की प्रभा जगमगा रही है।

मानवीय या प्राकृतिक कैसा भी सौन्दर्य हो, किसी दिव्य शिल्पी का कलात्मक प्रदर्शन, समस्त प्रकृति को उस अखण्ड आनन्दमय ब्रह्म की जाग्रतज्योति स्वीकार करने वाले कवि का सर्वत्र सौन्दर्य दर्शन की अवतारणा एक महत्त्वपूर्ण पथ प्रशस्त करती-कराती है।

पं. सुधाकर शुक्ल ने इतिहास और सौन्दर्य को आपस में समन्वित किया है, जिससे लोग दोनों का अनुसरण करें। **वर्तमान को संदेश देने के लक्ष्य से ही उन्होंने इतिहास के तथ्यों की अधिकाधिक रक्षा करते हुये इसका उपयोग करना उचित समझा, अतीत की पुनरावृत्ति मात्र उन्हें इश्ट नहीं।**[8] हिन्दी के सौन्दर्य शास्त्र ख्याति के विद्वान् पद्मभूषण आचार्य पंण् बलदेव उपाध्याय ने इस विषय का गंभीर विवेचन करते हुए अपना अभिमत निम्न प्रकार से प्रकट किया है।

निष्कर्ष- सौन्दर्य की व्यापक धारणा में अमर उभर कर आये उत्कर्ष बिन्दुओं को ध्यान में रखकर देखने पर विदित होता है। सुधाकर की सौन्दर्य धारणा, एक परिपूर्ण धारणा है। सौन्दर्य का गम्भीर अनुभव जो हमें सुधाकर ने दिया वह यह है कि सौन्दर्यानुभव बाह्य वस्तु के माध्यम से होता है जो साहित्यिक रस निष्पति के लिये विभाव रूप में अनिवार्यतः ग्रहण किया जाता है।

सौन्दर्य का अनुभव काल्पनिक न होकर वस्तुमूलक या जीवन मूलक होता है। वह हमारी चेतना के सूक्ष्मतर, पावनतर, व उज्ज्वलतर है। उसका हमारी आत्मा के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि केवल बाह्य या आन्तरिक दोनों दृष्टियां अतिवाद दोष से ग्रस्त हैं।

सौन्दर्य को केवल शारीरिक दृष्टि पर केन्द्रित रखने वाले महाकवि माघ की दृष्टि क्षणे-क्षणे यन्नवता मुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः तथा तस्य तदेव मधुरं यत्र यत्य मनोलग्नम् वाली मानसिक विचारधारा इन दोनों ही अतिवादों से मुक्त होकर सुधाकर ने सौन्दर्य की जो नवीन व्यापकतम परिभाषा प्रस्तुत की है वह हिन्दी एवं संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि है।

संदर्भ सूची

1. शुक्ल सुधाकर कसक पूर्वार्द्ध पृ. 31
2. शुक्ल सुधाकर, मेघसुधा, पृ. 49
3. देव दूतम् उत्तरार्ध में।
4. शुक्ल सुधाकर, मेघसुधा, पृ. 49
5. उपाध्याय कृष्देव, लोक संस्कृति की रूपरेखा, लोकभारती प्रकाषन इलाहाबाद, संस्करण 2014, पृ. 13
6. किरातार्जुनीयम्-4/23
7. आर्या-सुधाकरम्-1186
8. शर्मा प्रभा, महाकवि पं. सुधाकर शुक्ल का व्यक्तित्व एवं कृतित्व, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली, संस्करण 2022, पृ. 237